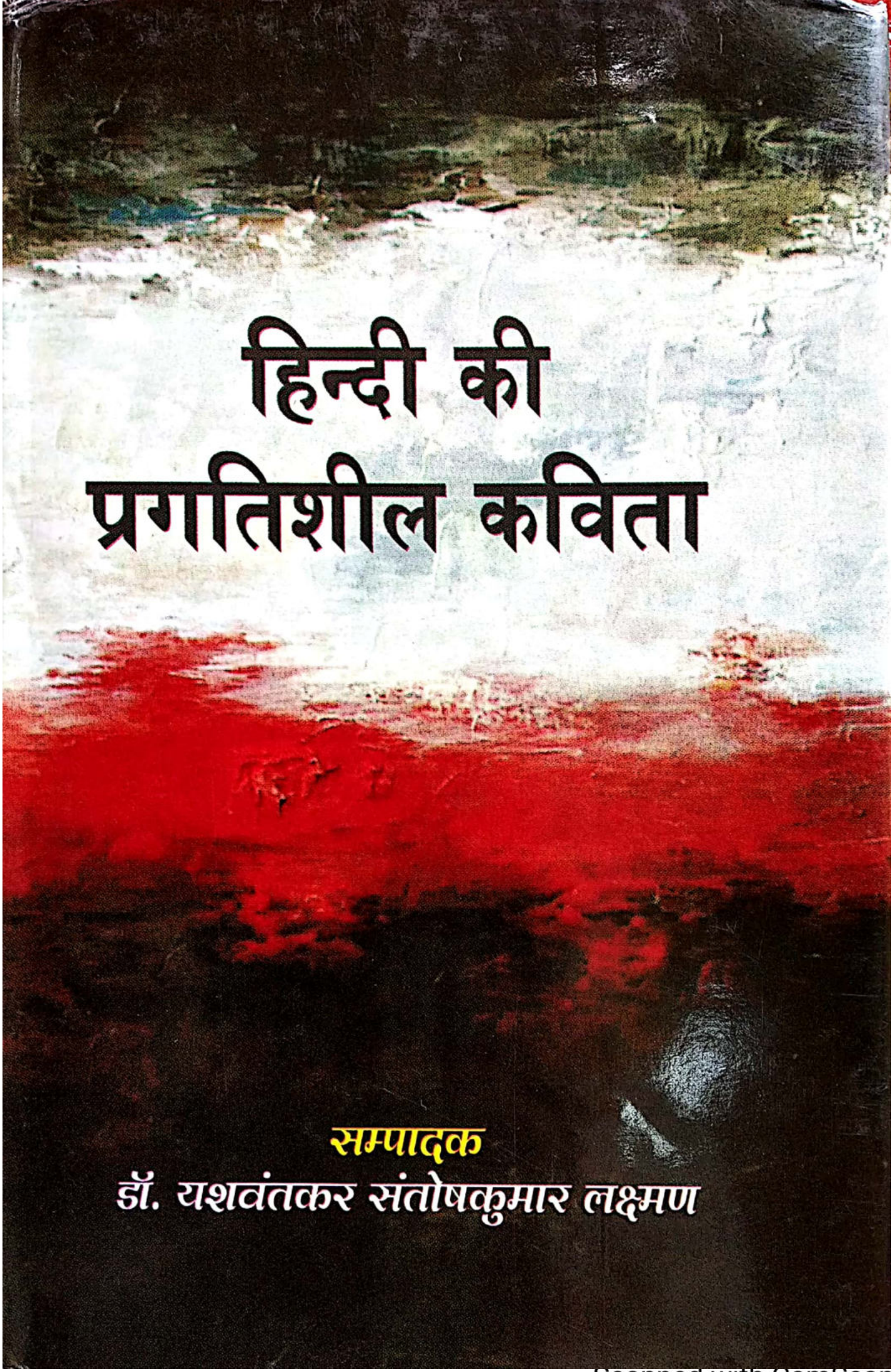

Scanned with CamScanner

मूल्य : सात सौ पचास रुपये मात्र

पुस्तक	:	हिंदी की प्रगतिवादी कविता
लेखक	:	डॉ. यशवंतकर संतोष कुमार लक्ष्मण
प्रकाशक	:	**पराग प्रकाशन** 311 सी. विश्व बैंक बर्रा, कानपुर - 208027
संस्करण	:	प्रथम, 2017 ई.
आवरण-सज्जा	:	छपाई घर, ब्रह्मनगर, कानपुर
शब्द-सज्जा	:	रिचा ग्राफिक्स, नौबस्ता, कानपुर
मुद्रक	:	साक्षी आफसेट, यशोदा नगर, कानपुर
मूल्य	:	750/-
I. S. B. N.	:	978-93-82409-28-1

Scanned with CamScanner

42. शिवमंगल सिंह 'सुमन' के काव्य में प्रगतिवाद 233
शेख आजम अलाउद्दीन
43. कवि नागार्जुन के काव्यांश में प्रगतिवादी चेतना 237
शेख अब्दलु गनी
44. समाज संस्कृति व धर्म का औपन्यासिक परिप्रेक्ष्य 242
डॉ. के. संगीता
45. उपयोगितावादी काव्य : प्रगतिवाद 248
डॉ. यशवंतकर संतोषकुमार लक्ष्मण
46. शोषित, पीड़ितों का पक्षधर कवि : नागार्जुन 251
डॉ. अनिल कुमार रामधन राठोड़
47. महाप्राण निराला के काव्य में व्यक्त
प्रगतिवादी स्वर 255
प्रा. डॉ. गोविन्द गुड़प्पा शिव शेट्टे
48. प्रगतिवाद बनाम प्रयोगवाद 258
प्रा. डॉ. संतोष गुंडप्पा गाजले
49. प्रगतिवादी कवि नागार्जुन 266
श्री इसुफअल्ली महंमद शेख
50. प्रगतिवादी विचारधारा के परिप्रेक्ष्य में
माण्तस्यु का राजनीतिक चिंतन 271
डॉ. कविता राजेन्द्र तातेड
51. प्रगतिवादी कवि गिरजा कुमार माथुर 277
प्रा. डॉ. सौ. सुरैय्या यूसुफअल्ली शेख
52. समसामयिक समस्याओं के चितेरे :
केदारनाथ अग्रवाल 280
डॉ. शेख सेबाशिरीन हारून शिंदे
53. प्रगतिवादी हिन्दी कविता 284
संतोष साहेबराव नागरे

Scanned with CamScanner

प्रगतिवादी हिन्दी कविता

संतोष साहेबराव नागरे

परिवर्तन कुदरत का नियम है। परिवर्तन ही विकास का मूलाधार है। साहित्य के क्षेत्र में भी परिवर्तन को देखा जा सकता है। आधुनिक हिंदी कविता का विकास भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, छायावाद, हालावाद, प्रगतिवाद, नयी कविता एवं समकालीन कविता द्वारा जाना जा सकता है।

आधुनिक हिंदी कविता राजदरबार से बाहर निकलकर जनता के दुःख-दर्द का वाहक बनी। भारतेन्दु युगीन कवियों ने प्राचीनता एवं नवीनता का समन्वय करते हुए तत्कालीन समस्याओं को अपने काव्य में उठाया। द्विवेदी युगीन हिन्दी कविता श्रृंगारिकता से राष्ट्रीयता, जड़ता से प्रगति तथा रूढ़ि से स्वच्छंदता की ओर अग्रसर हुई। द्विवेदी युग में खड़ी बोली काव्य भाषा बनी। छायावादी काव्य का जन्म द्विवेदी युगीन काव्य की प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ, क्योंकि द्विवेदी युगीन कविता विषयनिष्ठ, वर्णन प्रधान और स्थूल थी। जबकि छायावादी कविता व्यक्तिनिष्ठ, कल्पना प्रधान एवं सूक्ष्म है। इसलिए छायावाद को स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह भी कहा जाता है। छायावाद की अतिशय व्यक्तिनिष्ठता, कल्पना प्रधानता की प्रतिक्रिया स्वरूप प्रगतिवाद का उदय हुआ। मार्क्स के द्वंद्वात्मक भौतिकवाद पर आधारित काव्यधारा का नाम प्रगतिवाद है। प्रगतिवादी हिंदी कविता सामाजिक यथार्थवाद पर बल देते हुए शोषण मुक्त समाज का निर्माण करना चाहती है। यह प्रवृत्ति राजनीति के क्षेत्र में साम्यवाद, सामाजिक क्षेत्र में समाजवाद एवं साहित्य के क्षेत्र में प्रगतिवाद के नाम से जानी जाती है। इस संदर्भ में डॉ. शिवकुमार शर्मा कहते हैं– "जो विचारधारा राजनीतिक क्षेत्र में साम्यवाद, सामाजिक क्षेत्र में समाजवाद और दर्शन में द्वंद्वात्मक भौतिकवाद है, वही साहित्यिक क्षेत्र में प्रगतिवाद के नाम से अभिहित की जाती है। दूसरे शब्दों में मार्क्सवादी या साम्यवादी दृष्टिकोण के अनुसार निर्मित काव्यधारा प्रगतिवाद है।"[1]

प्रगतिवादी विचारधारा को लेकर काव्य सृजन करने वाले कवियों में सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन, रामविलास शर्मा, नरेंद्र शर्मा, शिवमंगल सिंह 'सुमन', रांगेय राघव, मुक्तिबोध आदि का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। प्रगतिवादी हिंदी कविता का लक्ष्य शोषण मुक्त समाज रहा है। शोषण मुक्ति हेतु प्रगतिवादी हिंदी कवियों ने

Scanned with CamScanner

ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध आवाज उठाते हुए स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया। साम्राज्यवादी अंग्रेज भारत की आर्थिक लूट कर रहे थे। इनसे शोषण बढ़ रहा था। शोषितों की शोषण मुक्ति आजादी के साथ जुड़ी होने के कारण प्रगतिवादी कवि अपना तन-मन-धन देश के लिए समर्पित करने को तैयार है। केदारनाथ अग्रवाल राष्ट्रीयता के भावों को वाणी देते हुए कहते हैं–

"गुलामी को मसल देंगे/न हत्यारों से डरते हैं।
हमें आजादी से जीना है/इसी से आज मरते हैं।।"[2]

आजादी के बाद पूँजीपतियों के प्रतिनिधित्व से बनी सरकार ने साम्राज्यवाद से साँठ-गाँठ कर ली। परिणामतः शोषण पूर्ववत ही बना रहा। आजादी के बाद अंग्रेज़ों से भी भयावह दमन, अन्याय, अत्याचार को देखते हुए अंग्रेजी गुलामी अच्छी लगने लगी। आजादी के बाद की बदली हुई भयावह स्थितियों पर प्रहार करते हुए नागार्जुन कहते हैं–

"खादी ने मखमल से अपनी सांठ-गांठ कर डाली है,
बिड़ला, टाटा, डालमिया की तीसों दिन दिवाली है।
जोर जुल्म की आँधी चलती बोल नहीं कुछ सकते हो,
समझ नहीं पाता हूँ कि हुकूमत गोरी है या काली है।"[3]

आजादी के पश्चात् पूँजीवादी व्यवस्था ने शोषणकारी सामंत एवं साम्राज्यवादियों के साथ मिलकर बहुसंख्यक आम-जनता को लूटना प्रारंभ किया। शासक बदल गये पर शोषण पूर्ववत ही बना रहा। एक ओर जमींदार, साहूकार किसान, मजदूरों का खून चूसकर अपने साम्राज्य की नींव मजबूत कर रहे हैं तो दूसरी ओर आम आदमी दो जून की रोटी के लिए तरस रहा है। खून चूसने वाले जमींदारों को भगवती चरण वर्मा 'दानव' कहते हैं, क्योंकि उनमें मानवता शर्म के लिए भी शेष नही। शोषण की पोल खोलते हुए 'भैंसा गाड़ी' कविता में भगवतीचरण वर्मा कहते हैं–

"वह राजकाज जो सधा हुआ है इन भूखे कंगालों पर,
इन साम्राज्यों की नींव पड़ी है, तिल-तिल मिटने वालों पर
वे व्यापारी, वे जमींदार, जो है लक्ष्मी के परम भक्त
वो निपट निरामिष खूदखोर पीते मनुष्य का उष्ण रक्त।"[4]

श्रमजीवियों की संघर्ष-क्षमता को क्षीण करने का काम शोषक वर्ग अगतिशील तत्वों के माध्यम से करते रहते हैं। डॉ. लल्लनराय इस सदर्भ में ठीक ही कहते हैं– "रूढ़िवाद, अंधविश्वास, भाग्यवाद, कर्मफल, साम्प्रदायिकता, धार्मिक कठमुल्लापन, वर्ण एवं जातिवाद, क्षेत्रवाद आदि ऐसे बहुत सारे तत्व भारतीय समाज में विद्यमान हैं, जो शोषित-उत्पीड़ित जन-समुदाय की वर्ग चेतना को कुन्द करते हैं, उन्हें विभाजित करते हुए उनकी संभावित संघर्ष क्षमता को कमजोर करते हैं। अपनी रचना में इनका विरोध करना, इन पर छाये हुए कुहासे को साफ करना आदि

Scanned with CamScanner

निश्चित रूप से शोषित उत्पीड़त वर्ग की पक्षधरता है।"[5]

रूढ़िवाद, अंधविश्वास, भाग्यवाद, कर्मफल, जातिवाद, साम्प्रदायिकता, भाषावाद, प्रादेशिक अस्मिता के नाम पर समाज को बाँटने की साजिश शोषक आये दिन रचते हैं। प्रगतिवादी कवि धर्म की अपेक्षा मानवता पर विश्वास रखते हैं। धार्मिक पाखण्ड पर प्रहार करते हुए केदारनाथ अग्रवाल कहते हैं–

"स्वर्ग पहुँचने की इच्छा से, लम्बे-लम्बे कदम धरते
जल्दी-जल्दी साँस भरते, नंगे-पैरों पैदल चलते!!
मैं बैठे सोचा करता हूँ– ऐसे कैसे बौड़म यात्री!
गंदे जीवन से पायेंगे, नंगे पैरों पैदल चलके
अपने मन का कल्पित स्वर्ग!!"[6]

भ्रष्टाचार आज की प्रमुख समस्या है। भ्रष्टाचार के कारण हमारा देश विकास पथ से भटक गया है। आजादी के 65 साल बाद भी सर्वहारा वर्ग रोटी, कपड़ा और मकान जैसी सामान्य जरूरतों को सुलझाने में ही अपना जीवन नष्ट कर रहा है। वैश्वीकरण के इस दौर में किसान आत्महत्याएँ करने के लिए विवश है। जब तक शोषणकारी व्यवस्था का विनाश नहीं हो जाता है तब तक आम आदमी शोषण मुक्त नहीं हो सकता। मुक्तिबोध इस संदर्भ में कहते हैं–

"कविता में कहने की आदत नहीं, पर कह दूँ
वर्तमान समाज में चल नहीं सकता।
पूँजी से जुड़ा हुआ हृदय बदल नहीं सकता,
स्वातंत्र्य व्यक्ति का वादी,
छल नहीं सकता मुक्ति के मन को–जन को।"[7]

प्रगतिवाद का मूलाधार मार्क्सवाद है। मार्क्सवादी विचारधारा पर साम्यवादी व्यवस्था का महल खड़ा है। रूस, चीन में साम्यवादी व्यवस्था पल्लवित एवं पुष्पित होने के कारण प्रगतिवादी कवियों ने मार्क्स, रूस, चीन, विएतनाम, लेनिन आदि की प्रशस्ति में कविताएँ लिखी। रूस प्रगतिवादियों के लिए तीर्थ स्थान है। रूस शोषित-उत्पीड़ित किसानों के लिए पवित्र स्थल है। अतः रूस के दुश्मन सब मजदूर किसानों के दुश्मन है। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय साम्राज्यवादी हिटलर और साम्यवादी रूस के बीच संघर्ष हुआ। रूस की लाल सेना ने साम्राज्यवादी हिटलर से रूस को तबाह होने से बचा लिया। रूस की लाल सेना की संघर्षगाथा को वाणी देते हुए शिवमंगल सिंह 'सुमन' कहते हैं–

"लाल फौज ने लाल खून से आज बनायी लीक है
इस जागृति के स्वर में जन-गन, कण-कण आज शरीक है
दस हफ्ते दस साल बन गये, मास्को अब भी दूर है।"[8]

प्रगतिवादी कवियों ने ग्रामीण प्राकृतिक परिवेश एवं वहाँ की जनपदीय

Scanned with CamScanner

संस्कृति की मार्मिकता के साथ अभिव्यक्ति दी। केदारनाथ अग्रवाल जी ने बुंदेलखण्ड, नागार्जुन जी ने मिथिला, रामविलास शर्मा एवं त्रिलोचन जी ने अवध की जनपदीय संस्कृति को वाणी दी। प्रगतिवादी कवि प्रकृति को किसान की नजर से देखते हैं। किसान जीवन में वर्षा ऋतु का अत्यंत महत्व है। समय पर वर्षा न होने के कारण फसल मुरझा रही है। फसल को बचाने के लिए किसान और उसकी पत्नी कड़ी धूप में खेत में पानी देने का काम कर रहे हैं किसान अपनी संतान की तरह फसल की रक्षा करता है। किसान के संघर्ष जीवन को वाणी देते हुए त्रिलोचन कहते हैं–

"आए न बहुत दिन बादल, होता नित घाम भयंकर
हरियाली न रही निर्मल, और लगी फसल मुरझाने
आखिर अपने बल लेकर, मिलकर वे दोनों प्रानी,
दे रहे खेत में पानी"[9]

प्रगतिवादी कवियों ने अपनी कविताओं में प्रेम भाव को वाणी दी। प्रगतिवादी कवियों का प्रेम दमित एवं कुंठित भावना की अभिव्यक्ति नहीं है। प्रणय चित्रण के अत्यधिक सात्विक चित्र प्रगतिवादी कविता में ही दृष्टिगत होते है। डॉ. रामचंद्र मालवीय इस संदर्भ में ठीक ही कहते हैं– "प्रणय तथा श्रृंगार का चित्रण प्रगतिवादी कविता में बहिष्कृत नहीं हुआ, परंतु उसे स्वस्थ भूमिकाओं में जीवन के एक अनिवार्य सम्बल के रूप में प्रमुखता मिली। त्रिलोचन शास्त्री, शिवमंगल सिंह 'सुमन', नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल की प्रणय विषय कविताएँ इस तथ्य का प्रमाण हैं कि किस प्रकार इन कवियों ने प्रणय को एक प्रेरणा के रूप में ग्रहण कर उसे अपने काव्य में चित्रित किया।"[10] प्रगतिवादी कवियों को जीवन संघर्ष की प्रेरणा अपनी पत्नी प्रिया से ही मिलती है। सच्चा प्रेम मनुष्य को कर्म एवं संघर्ष की प्रेरणा देता है। त्रिलोचन जी को उनकी पत्नी प्रिया का प्रेम जगत जीवन का प्रेमी बना रहा है। त्रिलोचन कहते हैं–

"मुझे जगत जीवन का प्रेमी बना रहा है
प्यार तुम्हारा, मेरी दुर्बलता को हरा कर
नयी शक्ति नव साहस भरकर तुमने
फिर उत्साह दिलाया–कर्म क्षेत्र में
बढ़ूँ संभलकर-तब से मैं अविरत बढ़ता हूँ
बल देता है प्यार तुम्हारा।"[11]

प्रगतिवादी कवियों ने जनभाषा के माध्यम से जनभावनाओं को अभिव्यक्ति दी। प्रगतिवादी कवियों की भाषा सहज, सरल एवं बोधगम्य है। 'निराला' जी ने कविता को छंद के बंधन से मुक्ति दी। मुक्त छंद के साथ ही प्रगतिवादी कवियों ने तुकांत की नयी परंपरा को अपनाया। प्रगतिवादी कवियों ने लोकगीतों का

Scanned with CamScanner

सृजन किया। परंपरागत छंदों के साथ ही गज़ल, सानेट, बेलैड, रूबाई आदि को प्रगतिवादी कवियों ने अपनाया। त्रिलोचन ने सानेट तो मुक्तिबोध जी ने फंतासी का सशक्त प्रयोग किया। बिम्ब, प्रतीक, उपमान आदि प्रगतिवादी कवियों ने जन-जीवन के बीच से लिये। डॉ. नगेंद्र प्रगतिवादी कविता के शिल्प पक्ष के संदर्भ में ठीक कहते हैं– "प्रगतिवादी कविता चूँकि सामाजिक जीवन की वास्तविकता को लेकर चली। जनता तक पहुँचना और जनता के जीवन की ही बात कहना उसका लक्ष्य रहा। इसलिए वह छायावाद की वायवी असामान्य, रेश्मी परिधान शालिनी और सूक्ष्म भाषा को छोड़कर सुस्पष्ट, सामान्य प्रचलित भाषा को अपनाकर चलीं। उसने प्रतीक, बिम्ब, शब्द, मुहावरे, चित्र सभी जन-जीवन के बीच से लिये। इसलिए एक बहुत ही जीवंत भाषा का उदय हुआ, जैसे रंगीन कुहासे को तोड़कर विषम यथार्थ धरातल पर उभर उठा हो।"[12] प्रगतिवादी कविता जन-जीवन के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी होने के कारण ही उसने जनभाषा को अपनाया। जनभाषा ही प्रगतिवाद में काव्य भाषा बनी। डॉ. मदन डागा कहते हैं–

"मेरी भाषा का व्याकरण, पाणिनी नहीं पद दलित ही जानते हैं
क्योंकि वे ही मेरे दर्द को पहचानते हैं।
मेरी कविता का कमल बगीचे के जलाशयों में नहीं।
स्लम (गंदी बस्ती) के कीचड़ में खिलेगा मेरी कविता का अर्थ (भावार्थ)
उत्तर पुस्तिका में नहीं फुटपाथों पर मिलेगा।"[13]

सारांश – प्रगतिवादी हिन्दी कविता का मूलाधार मार्क्सवाद है। प्रगतिवादी हिंदी कविता का लक्ष्य शोषण मुक्त समाज का निर्माण रहा है। अतः विश्व में जब तक शोषक वर्ग शोषितों का शोषण करता रहेगा तब तक उसकी प्रासंगिकता बनी रहेगी।

संदर्भ

1. डॉ. शिवकुमार शर्मा, हिंदी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ, पृ. 524
2. सम्पा. अशोक त्रिपाठी, कहें केदार खरी-खरी, पृ. 32
3. अनिल कुमार, प्रगतिशील चेतना और नागार्जुन का काव्य, पृ. 155
4. भगवतीचरण वर्मा, मानव, पृ. 68
5. डॉ. लल्लनराय, हिंदी की प्रगतिशील कविता, पृ. 18
6. केदारनाथ अग्रवाल, गुलमेंहदी, पृ. 34
7. सम्पादक. अशोक बाजपेयी, ग.मा. मुक्तिबोध : प्रतिनिधि कविताएँ, पृ. 164-165
8. शिवमंगल सिंह 'सुमन', प्रलय-सृजन, पृ. 64
9. त्रिलोचन, धरती, पृ. 12
10. डॉ. रामचंद्र मालवीय, केदार : समीक्षाएँ एवं मूल्यांकन, पृ. 31
11. त्रिलोचन, धरती, पृ. 01
12. सम्पा. डॉ. नगेंद्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 624-625
13. डॉ. मदन डागा, शाकाहारी कविताएँ, पृ. 33

◆

Scanned with CamScanner